International Journal of Advanced Education and Research
ISSN: 2455-5746; Impact Factor: RJIF 5.34
Received: 16-06-2019; Accepted: 18-07-2019
www.alleducationjournal.com
Volume 4; Issue 5; September 2019; Page No. 30-32

बौद्धकालीन शिक्षा के प्रमुख तत्व

डॉ0 जय प्रकाश पटेल [1], अंजू सिंह पटेल [2]
[1] छात्र–एम0 एस0 डब्ल्यू0, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालयए नई दिल्ली, भारत।
[2] असि0 प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, श्री टीकाराम कन्या महाविद्यालय, अलीगढ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
भारतीय शिक्षा के विकास क्रम में बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली का महत्वपूर्ण स्थान है। इस समय की शिक्षा संस्थाओं में लोकतांत्रिक व्यवस्था होना साधारण बात नहीं थी, क्योंकि तत्कालीन समाज में सामन्तवाद का बोलबाला था। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भी जनतांत्रिक व्यवस्था को बनाए रखने की आवश्यकता है। इससे जाति, लिंग एवं क्षेत्र के आधार पर विभेदीकरण समाप्त हो जाएगा। सभी नागरिकों को शिक्षा का समान अवसर प्राप्त होगा। इसी प्रकार बौद्धकालीन छात्रों एवं अध्यापकों का सरल जीवन को अपनाने की जरूरत है। इससे हमारे देश में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव कम होगा और भारतीयता का भशव परिपक्व होगा। बौद्धकालीन शान्ति एवं अहिंसा आज भी भारतीय समाज में अनुकरणीय है। इसे प्रत्येक शिक्षा संस्थाओं में प्रमुखता से क्रियान्वयन किया जाना चाहिए। इसी प्रकार छात्रों एवं शिक्षकों में अनुशासन को सरलता से बनाए रखने में आत्मनिरीक्षण सर्वोत्तम विधि मानी जाती है। इसे भी वर्तमान शिक्षा प्रणाली में स्वीकार किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त अन्य कई बौद्धकालीन शिक्षा व्यवस्था की विशेषताएं वर्तमान शिक्षा प्रणाली के लिए ग्रहणीय है, जिसका वर्णन शोध पत्र में है।

मूल शब्द : भारतीय, बौद्धकालीन, सामन्तवाद, लोकतांत्रिक।

प्रस्तावना
मानव जीवन में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अभाव में विकसित समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है। प्रत्येक शिशु जन्म के समय असहाय रहता है, वह सिर्फ जन्मजात प्रवृत्तियों को लेकर ही जन्म लेता हैं। वही शिशु धीरे–धीरे जन्मजात प्रवृत्तियों का शोधन करके एक सामान्य प्राणी से सामाजिक एवं बौद्धिक प्राणी बन जाता है। शिक्षा की ही सहायता से मानव के आचार–विचार एवं रहन–सहन में परिवर्तन एवं परिमार्जन होता है। शिक्षा ही किसी व्यक्ति को विकसित करने एवं समाज में स्थापित करने के लिए सशक्त भूमिका निभाती आ रही है। आदिम मानव के असभ्य एवं बर्बर जीवन की तुलना में आज मनुष्य शिक्षा से ही सभ्य एवं सुसंस्कृत जीवन जी रहा है। यह सभ्यता की सीढ़ी क्रमिक गति से बढ़ता जा रहा है। इसी कारण शिक्षा का प्रारम्भ मानव समाज के उद्भव काल से माना जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत पहले जब मानव जंगली जीवन छोड़कर सामाजिक जीवन जीने की ओर अग्रसर हुआ तभी शिक्षा ने अपने को स्थापित करना प्रारम्भ कर दिया। इस समय की शिक्षा अनुकरण एवं अनुभव पर आश्रित थी। पाषाणकाल से ही शिक्षा का व्यवस्थित रूप परिलक्षित होने लगा, क्योंकि कुछ पशुओं के सुन्दर चित्र गुफा की दीवालों पर खुदे हुए पाए गए हैं। सिन्धु सभ्यता में शिक्षा का लिपिबद्ध होने का प्रमाण मिलता है, परन्तु उस युग की लिपि को पढ़ पाना आज के साधारण जन की बात नहीं है। कुछ गिने–चुने विद्वानों ने हड़प्पा लिपि को पढ़ने का दावा किया है। हां, यह सत्य है कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली की नींव वैदिक काल से मानी जा सकती है। शिक्षा की दृष्टि से वैदिक काल को नवीन ज्ञान के उद्भव एवं विकास का सशक्त या परिपक्व काल कहा जा सकता है। अधिकांश विद्वान शैक्षिक गतिविधियों की ऐतिहासिकता वैदिक काल तक ही खोजने का प्रयास करते हैं। वैदिक काल के पश्चात् भी प्रत्येक युग में कई नवीन ज्ञान एवं सिद्धान्त या पद्धति का उद्भव हुआ, जिससे शैक्षिक जगत में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए। यह परिवर्तन शैक्षिक जगत से समाज में प्रत्येक क्षेत्र में परिलक्षित होते हैं।

हम जानते हैं कि वैदिक काल में शिक्षा मनुष्य के व्यक्तिगत क्रियाकलापों के साथ राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन से सम्बद्ध थी। धीरे–धीरे इसमें हवन, यज्ञ, पूजा–पाठ आदि कर्म काण्ड का बढ़ावा दिया जाने लगा, जिससे धार्मिक पुरोहितवाद का प्रारम्भ हो गया और शिक्षा पर ब्राह्मण वर्ग का एकाधिकार होने लगा। सभी नागरिकों को समान शिक्षा जैसे क्रियाकलाप कमजोर हो गए। शूद्र कही जाने वाली जातियां शिक्षा से उपेक्षित हो गयीं और स्त्रियां भी शिक्षा से दूर होने लगीं, जिससे जन साधारण में सामाजिक एवं शैक्षिक कार्यप्रणाली के बदलाव की इच्छा बलवती होने लगी। इसी समय ईश्वर रूपी गौतम बुद्ध का जन्म हुआ, जिन्होंने भारत की सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया। गौतम बुद्ध को कठोर तप से ज्ञान प्राप्त हुआ था और जन सामान्य के कल्याण हेतु अन्य नागरिकों को ज्ञानपरक बातें समझाने लगे। यह गौतम बुद्ध का उपदेश हो गया, जो बाद में बौद्ध धर्म के रूप में विस्तृत हो गया। बौद्ध धर्म भी व्यापक रूप से हिन्दू धर्म का विकसित रूप ही माना जा सकता है। बौद्ध धर्म में हिन्दू धर्म की धार्मिक एवं सामाजिक कठोरता को सरलीकृत किया गया है। यह सरलता एवं व्यापकता शिक्षा के क्षेत्र में भी परिलक्षित होता है। प्रस्तुत शोध पत्र में बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली के प्रमुख तत्व एवं उसकी वर्तमान शिक्षा प्रणाली में उपादेयता पर विचार किया जा रहा है।

बौद्धकालीन शिक्षा का मुख्य उद्देश्य छात्रों में नैतिक चरित्र का विकास करना था, जिससे बच्चों के दैनिक जीवन में सरल स्वभाव, अच्छा आचरण, कर्तव्यनिष्ठ जैसे गुण समाहित हो जाय। छात्रों को दस सिक्का पदानि अर्थात् दस शिक्षा पद ग्रहण करना आवश्यक होते थे। यह आदेश थे–(1) अहिंसा का पालन करना (2) असत्य भाषण मत करना (3) अशुद्ध आचरण मत करना (4) मादक वस्तुओं का प्रयोग मत करना (5) सत् आहार करना (6) सरल जीवन व्यतीत करना अर्थात् श्रृंगार की वस्तुओं का प्रयोग मत करना (7) नृत्य, संगीत, तमाशे आदि न देखना (8) बिना दिए किसी वस्तु को न लेना (9) निन्दा न करना (10) सोना–चाँदी एवं अन्य बहुमूल्य वस्तुओं का दान मत लेना। इन दस नियमों

का पालन करना प्रत्येक प्रव्रज्या संस्कार युक्त छात्रों के लिए अनिवार्य था। बौद्धकाल में प्रव्रज्या संस्कार का अभिप्राय बच्चे को शिक्षा के लिए घर से बाहर जाना एवं शैक्षिक केन्द्र में प्रवेश से है। विनयपिटक में प्रव्रज्या संस्कार का वर्णन है–''बालक अपने सिर के बाल को मुड़ाता था, पीले वस्त्र धारण करता था, प्रवेश करने वाले मठ के भिक्षुओं के चरणों को अपने मस्तक से स्पर्श करता था और उनके सामने पलथीमार कर भूमि पर बैठ जाता था। तदुपरान्त मठ का सबसे बड़ा भिक्षु उससे तीन बार यह शपथ लेने को कहता था–बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघ शरणं गच्छामि''[1] प्रव्रज्या संस्कार के पश्चात् बच्चे को नव शिष्य, श्रमण या सामनेर कहा जाता था। सामान्यतः प्रव्रज्या संस्कार बच्चे की आठ वर्ष की आयु पर किया जाता था। बौद्धकालीन शिक्षा के पाठ्यक्रम को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम एवं उच्च शिक्षा का पाठ्यक्रम। प्राथमिक शिक्षा में लिखना–पढ़ना एवं सरल गणित सिखाया जाता था। इसमें शिष्य गुरु से पाठ सुनता और उसका उच्चारण करता था। प्राथमिक शिक्षा में आचरण शुद्धता पर विशेष बल दिया जाता था। उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम के अन्तर्गत धर्म, दर्शन, भाषा, ज्योतिष, आयुर्वेद, इतिहास, गणित आदि विषयों को पढ़ाया जाता था। इन विषयों को पढ़ाने के लिए प्रश्नोत्तर, वाद–विवाद, व्याख्यान एवं प्रयोगात्मक विधि का सहारा लिया जाता था। बौद्धकाल में शिक्षा का माध्यम पालि या प्राकृत भाषा थी। इस समय गुरु–शिष्य सम्बन्ध मधुर थे। गुरु अपने व्यक्तित्व, विद्वता, उच्च चरित्र, संयम, अनुशासन एवं गरिमायुक्त व्यवहार से शिष्य के लिए अनुकरणीय होते थे। शिष्य भी गुरु का आदर एवं सेवा करने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। छात्रों की दिनचर्या अत्यधिक कठोर मानी जाती थी। प्रत्येक छात्र को कड़े अनुशासन में कठिन नियमों का पालन करना होता था। दैनिक कार्य समयानुसार पूर्ण करके शिक्षा ग्रहण हेतु प्रत्येक छात्र तैयार रहते थे। बौद्धकाल में बौद्ध मठों का अनुशासन भंग करने वाले छात्र को दण्डित किया जाता था। कभी–कभी मठ से निष्कासित कर दिया जाता था। प्रत्येक माह के प्रतिपदा एवं पूर्णिमा पर एक सामूहिक बैठक आयोजित की जाती थी। जिसमें प्रत्येक छात्र अपनी स्वयं की गलतियों को सबके समक्ष रखता था, जिससे पुनः गलती करने की संभावना समाप्त हो जाती थी। यह आत्मनिरीक्षण एवं स्वदोष अनुभूति की पद्धति वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भी अनुकरणीय है। प्रत्येक छात्र बौद्ध मठ में 12 वर्ष की शिक्षा पूरी करता था। अनिवार्य 12 वर्ष की शिक्षा के पश्चात् उसके समक्ष दो मार्ग होता था। पहला बौद्ध मठ छोड़कर घर वापस चला जाय और गृहस्थ जीवन व्यतीत करे और दूसरा मार्ग यह था कि जीवनपर्यन्त बौद्ध भिक्षु बनकर बौद्ध धर्म का प्रचार करे। इस दूसरे मार्ग को अपनाने वाले छात्रों का उपसम्पदा संस्कार होता था। उपसम्पदा संस्कार का अधिकारी वही छात्र होता था, जिसे बौद्ध मठ के भिक्षुक लोकतांत्रिक आधार पर सहमति प्रदान करें। उपसम्पदा संस्कार के पश्चात् नवप्रवेशी भिक्षुक भी मठ का स्थायी सदस्य हो जाता था। बौद्ध मठों एवं शिक्षा संस्थाओं के आय स्रोत एक महत्वपूर्ण विषय है। इस समय तक शिक्षा संस्थाओं में आर्थिक दृष्टि से राजकीय सहायता बढ़ गयी थी। शासन अपने संरक्षण में बौद्ध मठों को अनुदान करता था। इसके अतिरिक्त समाज के सम्पन्न व्यक्ति द्वारा अनुदान के प्रमाण मिलते हैं। शिक्षा संस्थाओं में शुल्क एवं भिक्षा भी आय की स्रोत थी। इस तरह की आय का व्यय छात्रों एवं अध्यापकों के दैनिक कार्य, वस्त्र, आवास, चिकित्सा, साहित्य एवं भवन निर्माण पर किया जाता था। बौद्धकाल में शिक्षा संस्थाओं को बौद्ध मठ के अलावा बौद्ध संघ, बौद्ध बिहार या बौद्ध संघाराम आदि नामों से जाना जाता था। बौद्ध मठ प्रायः शहर से दूर प्राकृतिक वातावरण में होते थे। इन मठों में छात्रों को सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ व्यावहारिक ज्ञान भी दिया जाता था। बौद्ध काल की शिक्षा संस्थाओं में तक्षशिला, विक्रमशिला, नालन्दा, वल्लभी, नादिया, मिथिला, ओदन्तपुरी, जगद्दला, घटिका, अग्रहार एवं ब्रह्मपुरी आदि प्रसिद्ध थी। तक्षशिला वर्तमान पाकिस्तान के रावलपिण्डी शहर से 20 मील दूरी पर था। यह बौद्ध काल से पहले भी शिक्षा केन्द्र के रूप में प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि तक्षशिला की स्थापना राजा भरत ने अपने पुत्र तक्ष के नाम से की थी। जन्मेजय एवं नाम्याज्ञा आदि विद्वान तक्षशिला के राजा से पर्याप्त सम्मान पाए थे। इसी प्रकार नालन्दा वर्तमान बिहार की राजधानी पटना से 50 मील दूरी पर था। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने नालन्दा के विशाल भवन के साथ बहुमंजिल पुस्तकालय की चर्चा की थी। नालन्दा का पुस्तकालय विश्व प्रसिद्ध था। यहां के शिक्षकों के प्रतिभा की चर्चा पूरे विश्व में होती थी और भारत के अतिरिक्त अन्य देशों के छात्र पढ़ने आते थे। नालन्दा शिक्षा केन्द्र में प्रवेश से पहले छात्र को कठोर प्रवेश परीक्षा देनी होती थी। इसी प्रकार के अन्य शिक्षा केन्द्र बौद्ध काल में किसी न किसी कारण चर्चित रहे थे।

बौद्ध काल की शिक्षा संस्थाओं में जनतंत्र को महत्व था। किसी एक भिक्षु या राज्य के राजा का दबाव नहीं होता था। सभी महत्वपूर्ण निर्णय लोकतांत्रिक ढंग से लिए जाते थे। बौद्ध मठों में छात्रों के प्रवेश को लेकर जातीय भेदभाव नहीं होता था। सभी जाति के बच्चों को शिक्षा का समान अवसर प्राप्त था। बौद्ध धर्म के प्रारम्भ में स्त्रियों को शिक्षा का अवसर नहीं प्राप्त हुआ था, परन्तु बाद में स्वयं गौतम बुद्ध ने स्त्रियों को भी मठों में प्रवेश की अनुमति दे दी। अतः बौद्ध मठों में स्त्रियां भी पवित्र जीवन व्यतीत करते हुए शिक्षा ग्रहण करती थी। सभी बौद्ध भिक्षु स्त्री हो या पुरुष को ब्रह्मचर्य का पालन करना होता था। इस कारण स्त्री भिक्षुक पुरुष भिक्षुक से अलग रहती थी। बौद्धकाल में भी सामान्य परिवार की महिलाओं का शिक्षा केन्द्र में प्रवेश अति न्यून था। इसका कारण तत्कालीन भारत की सामाजिक व्यवस्था को माना जा सकता है। हालांकि कुछ विद्वानों का मानना है कि स्त्रियों का बौद्ध मठों में प्रवेश से मठों का अनुशासन कमजोर पड़ने लगा, जो बौद्ध शिक्षा संस्थाओं को नष्ट करने में सहायक हो गया। बौद्ध काल में अहिंसा को सर्वप्रथम स्थान था। राजा से लेकर साधारण नागरिक अहिंसा परमो धर्मः सिद्धान्त के पोषक हो गए थे। इससे बौद्ध मठों में सैन्य प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं पड़ती थी और हमारा देश सैन्य शक्ति में कमजोर पड़ने लगा। यह अहिंसावादी विचारधारा भी बौद्ध मठों एवं बौद्ध धर्म को कमजोर करने में सहायक हो गयी।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि बौद्धकालीन शिक्षा भारत की शिक्षा व्यवस्था के विकास क्रम में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इस समय की छोटी कमियों पर ध्यान न देकर कई विशेषताओं को वर्तमान समय में अपनाया जा सकता है। अतः बौद्धकालीन शिक्षा के कई तत्व वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भी ग्रहणीय है। हम जानते हैं कि बौद्ध काल में छात्रों के चरित्र निर्माण पर विशेष बल दिया जाता था। इसे वर्तमान शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य में से एक होना चाहिए। प्रत्येक शिक्षा संस्थानों में एक पीरियड नैतिक शिक्षा का होना चाहिए। नैतिकता के अभाव में बच्चे की उच्च से उच्च शिक्षा कमजोर हो जाती है। कुछ विद्वानों का मानना है कि चरित्रवान अशिक्षित व्यक्ति के समक्ष चरित्रहीन शिक्षित व्यक्ति का आदर नहीं होता है। बौद्धकालीन शिक्षा संस्थाओं में छात्रों के चरित्र निर्माण के साथ प्रजातांत्रिक मूल्यों की प्रमुखता थी। मठों के समस्त कार्य जनतंत्र की सहमति के आधार पर होते थे। स्वयं गौतम बुद्ध ने बौद्ध धर्म में महिलाओं का प्रवेश बहुसंख्यक बौद्ध भिक्षुओं के विचारों को दृष्टिगत रखकर करवाया था। बौद्ध मठों में किसी नए छात्र का भिक्षुक बनने का निर्णय स्वयं छात्र नहीं करता था। मठ के भिक्षुक लोकतांत्रिक ढंग से बहुमत के आधार पर करते थे। यह आज की शिक्षा प्रणाली में अपनाने की आवश्यकता है। शिक्षा संस्थाओं में शिक्षकों के विचार को अपनाया

जाना चाहिए। यदि शिक्षकों के विचार में आपसी मतभेद हो तो जनमत कराया जाना चाहिए। वर्तमान काल में कुछ विद्यालय के प्रबन्धक एवं प्राचार्य अपने विचार को विद्यालय के शिक्षक एवं छात्रों पर थोपते हैं। माना कि संवैधानिक दृष्टि से प्रत्येक शिक्षा संस्थाओं में जनतंत्र ही है। अधिकांश विद्यालय प्रमुखता से अपनाते हैं, परन्तु आज भी कुछ विद्यालयों में भी प्रजातांत्रिक मूल्यों को बनाए रखने की जरूरत है, जहां प्रबन्धक मनमानी करना चाहते हैं। इसी प्रकार राजकीय विद्यालयों में शासन के अधिकारी वर्ग शिक्षकों पर अपने आदेश को मानने के लिए बाध्य कर देते हैं। चाहे वह आदेश अमुक विद्यालय पर प्रतिकूल असर ही डाले। यदि शिक्षक स्थानीय आवश्यकता के अनुसार विद्यालय कार्य को चलाता है तो उससे अधिक सार्थक परिणाम आते है। राजकीय विद्यालय में भी विद्यालय स्तर पर लोकतांत्रिक ढंग से किसी समस्या का समाधान किया जा सकता है। जैसा कि बौद्धकालीन शिक्षा केन्द्रों में किया जाता था। बौद्ध काल में छात्रों एवं शिक्षकों का आचरण अच्छा था। वे सरल जीवन जीते थे। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में छात्रों के लिए सरलता एवं सादगी को अपनाने की आवश्यकता है। प्रत्येक विद्यार्थी एवं शिक्षक को दिखावा से बचना चाहिए। छात्र एवं शिक्षक में शान्ति एवं अहिंसा को प्रमुखता देनी चाहिए। अराजकता फैलाने वाले छात्र या शिक्षक को कठोर दण्ड मिलना चाहिए। विद्यालय में हिंसा फैलाने वाले के खिलाफ कठोरता बरतनी चाहिए। बौद्ध काल में जनसाधारण की शिक्षा को वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अपनाया गया है। इक्कीसवीं सदी में अनिवार्य एवं निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा का प्रारम्भ बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली से माना जा सकता है। इसी प्रकार बौद्धकालीन शिक्षा में छात्रों को एक सभा के माध्यम से आत्मनिरीक्षण व स्वदोष अनुभूति का क्रियान्वयन अनुशासन के लिए उपयोगी है। इसे वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अपनाने की आवश्यकता है। आज के बाल केन्द्रित शिक्षा व्यवस्था में कुछ विद्यालय प्रशासन छात्रों पर अपना अनुशासन थोपते हैं। यदि किसी दबाववश या गलती से अनुशासन टूटता है तो बच्चे पर कठोर कार्यवाही हो जाती है। छात्रों के लिए बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली की आत्मनिरीक्षण पद्धति से सुधार का पूरा अवसर मिल जाता है। वर्तमान समय में भी आत्मनिरीक्षण पद्धति अपनाया जाना चाहिए। जिस प्रकार बौद्धकाल में प्रतिमाह दो बार अर्थात् प्रतिपदा एवं पूर्णिमा के अवसर पर एक सभा के माध्यम से स्वदोष अनुभूति की बैठक होती थी। उसी प्रकार प्रत्येक विद्यालय में प्रतिमाह दो बार छात्रों के आत्मनिरीक्षण हेतु बैठक अनिवार्यतः होनी चाहिए। अतः कहा जा सकता है कि बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली के कई तत्व या विशेषता वर्तमान शिक्षा प्रणाली के उपादेय है।

संदर्भ सूची

1. पी0डी0 पाठक एवं गुरसरनदास त्यागी–'भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा (2014–15) पृ0 23